हरियाणवी जनजीवन में लोक संगीत के विभिन्न आयाम

डॉ. लीना गोयल
हिन्दी विभाग
सहायक प्रोफेसर, सनातन धर्म कॉलेज,
अम्बाला छावनी

हरियाणवी जनजीवन से हमारा अभिप्राय विभिन्न समुदायों की संस्कृति, रहन–सहन, उनके आचार–विचार तथा जीवन की सामूहिक परम्पराओं के विकास से है। यह क्रिया मनुष्य को अन्य जीवों से अलग करते हुए सत्य, सौदंर्य, स्वतंत्रता का निर्माण करने वाले एक सार्वभौम प्राणी के रूप में उसकी पहचान करवाती है। अर्थात् संस्कृति श्रम और सृजन के जरिए मानव जाति के विकास की प्रक्रिया है।[1]

डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल ने इसे मानव के भूत, वर्तमान और भावी जीवन का सर्वांगपूर्ण प्रकार बताया है अर्थात् जीवन के नानाविध रूपों का समुदाय ही संस्कृति है।[2]

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि हरियाणवी जन–जीवन हरियाणा की संस्कृति का ही एक रूप है और उस पर किसी भी परिस्थिति में बाहरी वातावरण से अपने आप को बदलना है। अतः प्रकृति की कृति में विकार को विकृति एवं उस कृति में सुधार को संस्कृति कहा जाता है। सम्भवतः इसीलिए महर्षि दयानंद ने एक वेदमंत्र का अर्थ करते हुए इसे विद्या सुशिक्षा नीतिशास्त्र बतलाया है।[3]

लोक संस्कृति जनित की आत्मा जनसाधारण के रीति–रिवाजों, आचार–विचार तथा लोकगीतों में निहित मानी गई है। मानव अपने परिवेश में जो कुछ देखता–सुनता है, उसे अपनी वाणी से गीतों, कहानियों आदि के रूप में अभिव्यक्त करता रहा है, जिन्हें लोकगीतों या लोक कहानियों की संज्ञा दी जा सकती है। यही लोकगीत अत्यंत प्राचीन एवं मानवीय संवेदनाओं के सहजतम उद्‌गार है। यह लेखनी द्वारा नहीं बल्कि लोक

जिह्म का सहारा लेकर जनमानस से निरूसृत होकर आज तक जीवित है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने भी कहा था कि लोक–गीतों में धरती गाती है, पर्वत गाते है, नदियां गाती है, फसलें गाती है। उत्सव, मेलों और अन्य अवसरों पर मधुर कंठों में लोक समूह लोक गीत गाते है।

समय में परिवर्तन के साथ–साथ ये गीत बदलते रहते है और इनमें नए अंश जुड़ जाते है। इस प्रकार लोक गीतों की ताजगी, मिठास, और आकर्षण बरकरार रहता है।[4]

जनजीवन को बनाए रखने में लोक गीतों की यह संजीवता संजीवनी का कार्य करती है। जीवन में जन्म से मृत्यु तक लोक गीत व्याप्त रहता है। जन्म पर भी गीत गाने की परम्परा है, जहां इन्हें जच्चा गीत के नाम से पुकारा जाता है। इसके बाद युवा होने पर विवाह गीत, बिछुड़ने पर विरह–गीत, बुढापे के गीत गाए जाते है, जिन्हें हरजस कहा जाता है। इनके साथ–साथ विभिन्न ऋतुओं, तीज–त्योहारों के गीत, लोक–विश्वास तथा लोक नृत्य में भी संगीत विद्यमान है। हरियाणा अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण सदैव 'युद्धक्षेत्र' बना रहा। हर क्षेत्र की एक अलग समृद्ध सांस्कृतिक पहचान है, जो इसके लोक गीतों में परिलक्षित होती है।

वैसे तो हरियाणवी जनजीवन से जुडे अनगिनत आलेख है। परंतु इस जनजीवन में लोक गीतों के कुछ आयामों का विवरण इस प्रकार है–

लोक गीत एवं देवी–देवता–

हरियाणा का दक्षिणी क्षेत्र अहीर जाति के लोगों की बहुलता के कारण 'अहीरवाल' कहलाता है। इस प्रदेश की यह विशेषता है कि आठ कोस पर पानी व बोली बदल जाती है। इसका असर समाज में प्रचलित लोकगीतों पर भी पड़ता है। अहीरवाल के लोकगीतों में भी विविधता है। किसी भी काम को शुरू करने से पहले भगवान को याद करने की इस क्षेत्र की परम्परा है। अधिकांश गीत कृष्ण से सम्बन्धित है। अहीर समाज में यह स्वाभाविक भी है। मनुष्य को भजन ना करने के परिणाम भी बताए गए है।

भज ले रै बंदा नाम हरि का,
फेर भजणे ना पावागौ,
घर कुम्हारां कै गधो बणागे।,
ढाई मण बोझ लदावागे।।

अनेक बार किसी उत्सव का समय बहुंत संक्षिप्त होता हैं। इतना

संक्षिप्त कि जब तक ये गीत पूर्ण हो, तब तक उत्सव ही समाप्त हो जाता है। परिणामस्वरूप अन्य गीतों के गाने का अवसर ही नही मिल पाता। ऐसे अवसर पर इन पूरे गीतों को न गाकर स्त्रियां केवल पाँच बताशे गाकर ही इन देवी–देवताओं का स्मरण कर लेती है–

पाँच बताशे पान्नां का बिड़ला ले माता पै जाइयो जी,
जिस डाली पै म्हारी माता बैठी,
वा डाली झुक जाइयो जी।
पांच बताशे पान्नां का बिडला ले माता पै जाइयो जी,
जिस डाली पै म्हारी देवी बैठी,
वा डाली झुक जाइयो जी।

इस प्रकार इस क्षेत्र में प्रचलित ये लोक गीत एवं भजन यहाँ के लोगों की मानसिकता के परिचायक है।

लोक गीत एवं विवाह उत्सव–

हरियाणा प्रदेश के सोनीपत और रेवाडी के विवाह गीतों पर 'कोस–कोस पर बदले वाणी' उक्ति स्पष्ट चरितार्थ होती है। विवाह से पूर्व लड़के व लड़की को 'बनवारा' दिया जाता है। यह कार्य पाँच–सात दिन पूर्व होता है, जिसमें बान बैठाना, चौका पूजना, कलावा बांधना, बटणा लगाना, तेल चढाना, बान बैठाना इत्यदि क्रियाएं होती है। प्रत्येक क्रिया का एक लोक गीत से ही सम्पूर्ण होती है। इसी समय गाए जाने वाले गीतों में महिलाएं विभिन्न जाति के लोगों, रिश्तेदारों को उन के योग्य काम कहती है, उनका बन्ना या लाडो जो इस समय बान पर बैठ गया है, उन्हें जिन वस्तुओं की आवश्यकता है वे ये ही लोग ला सकते है। इन्हे सम्बोधित करते हुए वे गाती है–

कहिये री उस कुम्हार के छोरे नै,
कूंडा तो ल्यावै म्हारे लाल नै।
कहिये री उस चमार के छोरे नै,
जूते तै ल्यावै म्हारे लाल नै।
कहिरे री उस म्हारे समधी नै,
बनड़ी तै ब्यावै म्हारे लाल नै।

वास्तव में ब्याह–शादी की सभी परम्पराएं व्यक्ति के हर्षोल्लास के लिए ही होती है, जिन्हे लोक गीतों के माध्यम से अभिव्यक्ति मिलती है।

लोक गीत एवं विरह–

विवाह सूत्र में बंधने के बाद पति–पत्नी अपने हर सुख–दुख को सांझा करते है। एक–दूसरे से दूर रहने की कल्पना से ही सिहर उठते है । यदि परिस्थितिवश ऐसा हो जाए तो भी हरियाणा के लोकगीतों को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। यहां के त्यौहार, जहां एक ओर खुशी का वातावरण दर्शाते है, वही दूसरी ओर भावुक मन की वेदना भी प्रकट करते है। विभिन्न ऋतुओं में तथा त्योहारों में विरहन अपनी सखियों को ठिठोली कर जाते देख तड़प उठती है। तीज का त्योहार, सावन का महीना, फौज में जाते पति की याद, चैत, बैशाख, जेठ की धूप, फागुण का महीना इत्यादि से सम्बन्धित लोक गीत हरियाणवी जन–जीवन को प्रदर्शित करते है।छुटटी पूरी होने पर दोबारा फौज में न जाने के लिए पत्नी पति को मनाती है–

मत जाओ पिया परदेस
देख हो मैं मर ज्यांगी।
अब ना खाऊं, मारो चार पवन के
फटकोर उड़ ज्यांगी।

सावन के मीठे दिनों में साजन नहीं आए तो वह कहती है–

सामण का महीना मेघा रिमझिम–रिमझिम बरसै।
मन नै समझाऊँ तो बी बैरी जीवन तरसै।
तीजां के दिनां की तो थी आस बड़ी भारी।
ऐसे मैं भी साजन ना आए
मैं पड़ी दुखां की मारी।

इस प्रकार के गीत हरियाणवी जनजीवन की विरह से भरी जिदंगी के परिचायक है।

लोकगीत एवं लोकविश्वास–

प्रत्येक प्रदेश के अपने लोक विश्वास होते है। हरियाणा जो अनेक अंचलों में बंटा हुआ है, उसके भी अपने ही लोक विश्वास है जो उसके गीतों में स्पष्ट झलकते है। कृषि सम्बंधी कार्यो के लिए हरियाणा के लोग बुधवार को शुभ मानते है। यहां एक कहावत प्रसिद्ध है–

''बुध बोवणी, सुक्कर लावणी।''

पशुओं के क्रय–विक्रय मंगलवार, शनिवार को शुभ माना गया है। मकर संक्रांति को हल चलाना, गाड़ी चलाना अशुभ है। घर से निकलते हुए पीछे से आवाज लगाना, बिल्ली का रास्ता काटना अशुभ है। यात्रा शुरू करते समय छींकना अशुभ है, इसके विषय में कहते है–

छींकत न्हाइए, छींकत खाइए,

छींकत रहिए सो।

छींकत पर घर ना जाइए,

चाहे कुछ भी हो।

पशु–पक्षियों की बोली, भविष्य बताने वाली मानी गई है। मुंडेर पर कौआ का बोलना मेहमान के आने का सूचक है–

उड़ ज्या रै काग ला,

आज म्हारै कौण आवैगे।

ये लोकगीत हरियाणवी जन–जीवन के लोक–विश्वास को दर्शाते है।

लोक गीत एवं लोक नृत्य–

हरियाणा में लोक गीतों के साथ–साथ लोक नृत्य की भी सुदीर्घ परम्परा रही है, जो हरियाणावासियों के जन–जीवन के अनुरूप है। भले ही अब धीरे–धीरे हमारे सामाजिक जीवन पर शहरी सभ्यता का प्रभाव हावी होता जा रहा है। फिर भी हरियाणा के लोक–नृत्य अभी तक बम्बइया फिल्मों के दुष्प्रभावों से मुक्त है। इन नृत्यों के साथ गाए जाने वाले गीत बड़े सीधे–साधे होते है और परम्परागत धुनों पर आधारित होते है। यह संगीत, बीन, सारंगी, बांसुरी तथा शहनाई, डफ, नगाड़ा, मंजीरा जैसे वाद्य–यंत्रों द्वारा दिया जाता है। खंजरी, झिल, उफ, घड़वा के साथ लयबद्व संगीत जुटाया जाता है। ताल, रूपक, कहरवा तथा नकटा दादरा का ही एक रूप है। इसकी ताल तो वैसी ही होती है, किन्तु इसके स्पर्श में थोड़ी भिन्नता रहती है।

हरियाणा के लोक नृत्य वस्तुतः पीढ़ियों से चली आ रही परम्परा को सुरक्षित रखे हुए है। धमाल नृत्य का मूल महाभारत में खोजा जा सकता है। सांग और रागनियां हरियाणा की लोक–परम्परा के हर ताने–बाने मे बंधी हुई है। इनके द्वारा गायकों ने अतीत के लोकनायको को अमरत्व प्रदान किया है। इन नृत्यों ने हरियाणा के साथ लगते राज्यों की परम्पराओं

की भी झलक मिलती है। हरियाणा के इन लोक नृत्यों में विद्यमान अनेकरूपता सादगी और भक्ति और गुणवत्ता का सही अनुमान इनका प्रत्यक्ष आनंद उठाकर किया जा सकता हैं। प्रत्यक्ष दर्शन में ही इनका वास्तविक सौदर्य हमारे सामने उजागर होता है।

लोक–नृत्य लोक–गीत एक दूसरे के पूरक है, जो प्रकृत्ति के उद्‌गार है। साहित्य की छंदबद्धता एवं अलंकारों से मुक्त रहकर ये मानवीय संवेदनाओं के संवाहक के रूप में माधुर्य प्रवाहित कर मानवीय जीवन को तन्मयता के लोक संगीतों के विभिन्न आयामों से जोड़े हुए है, क्योंकि इन गीतों में सुख–दुख विभिन्न संस्कार, जीवन मृत्यु बड़े ही ह्रदयस्पर्शी ढंग से प्रस्तुत किए गए हैं।

संदर्भ–सूची

1.डॉ. सोहन शर्मा, भाषा–संस्कृति और समाज

2.डॉ. पूर्णचंद शर्मा, हरियाणा की लोकधर्मी नाट्य परम्परा पृ.–14,15

3.डॉ. पूर्णचंद शर्मा, लोक संस्कृति के क्षितिज, पृ.–11,12

4.रोहित यादव, अहीरवाल के लोक गीत